स्वामी विशुद्धानंद सरस्वती एवं स्वामी दयानंद सरस्वती का वो ऐतिहासिक का शास्त्रार्थ

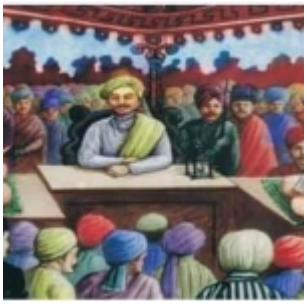

काशी में हुऐ कुछ ऐतिहासिक शास्त्रार्थ :~

“वादे-वादे जायते तत्वबोधः”

प्राचीनकाल से ही काशी में प्रतिदिन शास्त्रसभा का आयोजन होता था।सभा में विराजमान शास्त्रमहारथी पहले शास्त्रार्थ करते थे तत्पश्चात् दक्षिणा ग्रहण करते थे।नागपञ्चमी के दिन काशी के नागकुआँ पर शास्त्रज्ञों तथा छात्रों में शास्त्रार्थ करने की परम्परा वर्तमान में भी है।

वर्तमान में भी विवाह के अवसर पर कन्या और वर पक्ष के विद्वान् परस्पर विविधोपयोगी प्रमेयों पर शास्त्रार्थ करते हैं।अब इस परम्परा का ह्रास होने लगा है।काशी चूँकि व्याकरणशास्त्र की अध्ययनस्थली तथा महर्षि पतञ्जलि की कर्मस्थली होने के कारण शास्त्रविषयक उहापोह के लिए पुरातनकाल से ही जानी जाती है।

विद्वानों की क्रीडास्थली काशी में वर्षों से ऐतिहासिक शास्त्रार्थ सम्पन्न हुऐ है।कुछेक शास्त्रार्थों को लिपिबद्ध भी किया गया है परन्तु अधिकांश प्रसिद्ध शास्त्रार्थों को लिपिबद्ध ही नहीं किया गया है।

‘वैयाकरण केशरी महामहोपाध्याय पण्डित दामोदर शास्त्री’ तथा मैथिल विद्वत्वरेण्य ‘पण्डित बच्चा झा’ के मध्य जो अद्भुत् शास्त्रार्थ हुआ था उस अद्वितीय शास्त्रार्थ ने इतिहास में स्थान पा लिया है।
इस गम्भीर शास्त्रार्थ को देखने के लिए विद्वानों के अतिरिक्त हजारों की संख्या में साधारण जनता भी सम्मिलित हुई थी।

एतदतिरिक्त काशी के उद्भट् विद्वान् ‘महामहोपाध्याय पण्डित गङ्गाधर शास्त्री’ तथा वल्लभसम्प्रदाय के प्रसिद्ध पण्डित प्रज्ञाचक्षु ‘श्रीगट्टूलालजी’ से गोपालमन्दिर में जो प्रसिद्ध शास्त्रार्थ हुआ वह भी इतिहास का विषय बन गया है।इस शास्त्रार्थ में पं॰ गङ्गाधर जी को विजयश्री प्राप्त हुई थी।

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती से काशी के अनेक विद्वानों का शास्त्रार्थ हुआ था।किन्तु यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि दयानंद सरस्वती को प्रत्येक शास्त्रार्थ में पराजय स्वीकार करनी पड़ी थी भले ही आर्यसमाज के अनुयायी इस सत्य को स्वीकार न करें।

काशी के 'पंडित बालशास्त्री' जो अपने वैदुष्य से बलात् सभी को मोहित कर लेते थे इनके साथ दयानंद सरस्वती का एक ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ था।इस शास्त्रार्थ में पं॰ बालशास्त्री जी ने दयानंद सरस्वती के 'दम्भ' को खण्ड-खण्ड किया था।इस शास्त्रार्थ में दयानंद सरस्वती ने काशी के सभी विद्वानों और अपने अनुयायियों के मध्य अपनी पराजय स्वीकार की थी।

१९वीं शती में 'स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती' जी ने अपने अलौकिक अगाध वैदुष्य से विद्यानगरी वाराणसी को अलंकृत किया था।महाराज ने अपनी शास्त्रीय शेमुषी तथा योगविद्या के प्रभाव से काशी के इतिहास में अपना नाम अंकित करवाया है।

इनका जन्म कान्यकुब्ज ब्राह्मणकुल में १७२० शाके(१८२०ई॰)में हुआ था।इन महायोगी का प्रभाव सार्वभौम था।उत्तर भारत के राजा-महाराजा इनके पाद्पद्मों में लोट-पोट होकर स्वयं को धन्यातिधन्य अनुभव करते थे।सरस्वती और लक्ष्मी का नैसर्गिक विरोध इनके समक्ष शान्त हो गया था।

काशीनरेश प्रभु नारायणसिंह इनके अनन्य सेवक थे।प्रण्डितप्रवर 'दु:खभञ्जन कवीन्द्र' इनके मान्य शिष्य थे।

महायोगी स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती और दयानन्द सरस्वती का एक ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ था।जिसका वर्णन करना यहाँ प्रासंगिक भी है और विद्वानों की रूचि का विषय भी अत: समासविधि से उसका उल्लेख करते हैं।

दयानंद सरस्वती ने इस ऐतिहासिक शास्त्रार्थ में अपनी पराजय स्वीकार की थी।
यह शास्त्रार्थ काशी में दुर्गाकुण्ड के निकट राजा अमेठी के 'आनन्दबाग' में सम्पन्न हुआ था।दयानन्द सरस्वती का आवास यहीं पर था। विक्रमी सम्वत् १९२६ कार्तिक शुक्ला द्वादशी मङ्गलवार,तदनुसार १६ नवम्बर १८६९ को यह शास्त्रार्थ आयोजित हुआ था। काशीनरेश महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह अपने १४ वर्षीय राजकुमार के संग अध्यक्ष के पद पर समासीन थे। उनके मुख्य सभापण्डित साहित्य तथा न्याय के वैदुष्य से मण्डित तथा अनेक ग्रन्थों के प्रणेता 'श्रीताराचरण तर्करत्न भट्टाचार्य' साथ में विराजमान थे।बड़ी संख्या में काशी के अन्यान्य विद्वान् समुपस्थित थे। काशी विद्वन्मण्डली की ओर से दो ही प्रतिनिधि शास्त्रार्थ हेतु चुने गऐ थे स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती और 'पण्डिताग्रणी बालशास्त्री'।

धार्मिक जनता उत्साह और विस्मयपूर्वक प्रभूत संख्या में उपस्थित थी। धुरन्धर पण्डितों के अतिरिक्त काशी के प्रख्यात धनी तथा कवि "भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" अपने अनुज गोकुलचन्द्र के साथ सभा में विराजित थे।इसके अतिरिक्त काशी के बाहर से भी मान्य सज्जन उपस्थित थे।वेदवाणी पत्रिका मे यह शास्त्रार्थ छपा था तथा जनता की उपस्थिति ६०००० बताई गई थी।पण्डित मथुराप्रसाद दीक्षित ने यह शास्त्रार्थ "सच्चा काशी शास्त्रार्थ" नामक हिन्दी पुस्तक जो १९१६ ई॰ में प्रकाशित हुई थी, में छापा था।

इस शास्त्रार्थ का विषय था- "मूर्तिपूजा"।

४५ वर्षीय दयानंद सरस्वती मूर्तिपूजा,श्राद्ध आदि को वेदविरूद्ध मानते थे और अपने आग्रह पर दृढ़ता से डटे थे। काशीनरेश ने अपने सभापण्डित श्रीताराचरण तर्करत्न को सम्बोधित करते हुऐ कहा कि

शास्त्रार्थ आरम्भ कीजिए।मैं भी वादी-प्रतिवादी के कथनों का सार ग्रहण करने हेतु पक्षपातशून्य होकर श्रवण करने के लिए सावधानीपूर्वक बैठा हूँ।

श्रीताराचरण तर्करत्न :~ {बोलने के लिए उद्यत होते हैं}

स्वामी दयानंद :~ प्रतिमापूजन वेद में कहाँ लिखा हुआ है ?उत्तर एक ही व्यक्ति एक ही बार दें।

ताराचरण :~ केवल वेद ही प्रमाण हैं और कुछ(स्मृतिपुराणेतिहासादि) प्रमाण नहीं हैं इसमें क्या प्रमाण है ?

स्वामी दयानंद :~ वेद में जो नहीं मिलता है,अप्रमाण ही है,वह कथमपि प्रमाण नहीं है।

ताराचरण :~ ऐसा क्यों ? अर्थात् जो वेद में न मिले ,परन्तु स्मृतिपुराणादि में उल्लिखित हो,उसे प्रमाण क्यों न माना जाऐ ?इनके न मानने में क्या प्रमाण है ?

स्वामी दयानन्द :~ वेदविरूद्ध वस्तुओं का प्रमाण नहीं है।

ताराचरण :~ आपके इस कथन में क्या प्रमाण है ?

स्वामी दयानंद :~ इस कथन में प्रमाण है श्रुति एवं मनुस्मृति।

ताराचरण :~ उसी को बताईऐ।जो वेदमन्त्र वेदातिरिक्त स्मृतिपुराणेतिहासादि के प्रामाण्य का निषेधक है,उसे कहिए।अथवा मनुस्मृति का वह श्लोक ही कहिए जिसमें यह तथ्य प्रतिपादित है।

स्वामी दयानंद :~ प्रामाण्य विचार आगे होगा।सम्प्रति प्रस्तुत वेद विचार कीजिऐ।

ताराचरण :~ कैसा वेदविचार करना चाहते हो ?
वेद के नित्य-अनित्यत्व का विचार अथवा वेद की प्रामाणिकता-अप्रामाणिकता का विचार ?

स्वामी दयानंद :~ पत्थर की प्रतिमा का पूजन वेद में कहा है या नहीं ? यह विचार करना चाहिऐ।

ताराचरण :~ वेद के समान स्मृत्यादि का प्रामाण्य भी हमें स्वीकृत है।पुराणादिकों में प्रतिमापूजन का विधान है।तब प्रतिमा पूजन शास्त्र से सम्मत सिद्ध हो ही जाता है।

दयानंद स्वामी :~ हम स्मृति तथा पुराण का प्रमाण नही मानते।वेद से अतिरिक्त प्रमाण नही होते।

ताराचरण :~ वेदविरूद्ध क्या है ? स्मृति,इतिहासादि तो वेदविरुद्ध नहीं है। तब वेदविरुद्ध किसे कहते हैं आप ?

दयानंद स्वामी :~ जो वेद में नही है वह वेदविरुद्ध ही है।

ताराचरण :~ यह वेद का कथन है अथवा श्रीमान् जी का कथन है।

बालशास्त्री :~ वेद में अनुक्त वस्तु अप्रमाण है इस कथन में हेतु क्या है स्वामी जी। ?इसका विचार आरम्भ में करना चाहिऐ

दयानंद स्वामी :~ श्रुतिस्मृत्यादि का मूल वेद है ।मनु,कात्यायन महाभारत आदि इसके प्रमाण हैं। जिस प्रकार मन्त्रादिकों का तथा वेदान्तमीमांसा के सूत्रों का मूल वेद है, उसी प्रकार प्रतिमा पूजन का मूल वेद में दिखाईऐ।

स्वामी विशुद्धानन्द :~ क्या बारम्बार आप कहते हैं कि वेदान्तसूत्रों का मूल वेद है।
यदि यह बात है तो बताईऐ "रचनानुपपत्तेश्च नानुमानं प्रमाणं" इस ब्रह्मसूत्र(२•२•१) का मूलभूत वेद कहाँ है ?

इसका उत्तर स्वामी दयानंद स्वामी से नही दिया गया ।उन्होंने स्वीकारा का मुझे सब वेद कण्ठस्थ नही है और मैं इसका उत्तर नहीं दे सकता।

अब स्वामी दयानंद स्वामी विशुद्धानन्द को कहते हैं -" यदि आपको सब उपस्थित है तो धर्म का लक्षण बताईऐ।"

स्वामी विशुद्धानन्द :~ "चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः"।

स्वामी दयानंद :~ धर्म के दश लक्षण हैं। मनु ने लिखा है- "धृतिःक्षमा दमोऽस्तेयः•••••••••

ताराचरण :~ ये दसों धर्म के लक्षण थोड़े ही हैं, ये तो अनुमापक हेतु हैं।

दयानन्द स्वामी क्रुद्ध होकर विशुद्धानन्द जी की ओर मुड़कर बोले -" आप बताओ स्वामी धर्म में कौन श्रुति है ?

स्वामी विशुद्धानन्द :~ "अग्निहोत्रं जुहोत्यादि"।

दयानंद स्वामी ने बात टाल कर कहा -"प्रतिमा पूजन का वेद में कहीं विधान नहीं है ।सामवेद के केवल एक मन्त्र में प्रतिमा का निर्देश है,परन्तु वह भूलोक की बात न होकर ब्रह्मलोक की बात है"।

ब्रह्मलोकपरक होने की बात कहने पर बालशास्त्री ने आपत्ति उठाई- "आप जैसा तात्पर्य समझ रहे हैं वैसा तात्पर्यार्थ नही निकलता।
आपके दिए शब्द में अन्वावर्तन शब्द आया है ।इसका अर्थ है-"अनु=अनुलक्ष्यीकृत्य आवर्तनम्"।
अर्थात् जब ब्रह्मलोक में उपद्रव हो तो उसके लिए शान्ति करनी चाहिऐ। कहाँ ? इस मर्त्यलोक में ही तो।

बालशास्त्री :~ ब्रह्मलोक में कौन शान्ति करेगा ?

स्वामी दयानन्द :~ स्वर्गादि लोक में इन्द्रादि देवता हैं या नहीं ?

स्वामी विशुद्धानन्द :~ देवता मन्त्रात्मक होते हैं। इन्द्रादि देवता तत्तत् मन्त्रस्वरूप ही हैं,उनका देह नही होता तब शान्ति करेगा ही कौन ?

इस पर दयानन्द स्वामी ने उपासना की बात उठाई।

स्वामी दयानंद :~ उपासना ऐसे देवता की कैसे होती है ?

स्वामी विशुद्धानन्द :~ प्रतीकोपासना होती है।वेद की सहस्राधिक शाखाऐं हैं उन्हीं किसी में यह यह रहस्योद्घाटन हुआ है।
अच्छा ये बताईऐ वेद अपौरुषेय हैं तब इनका प्रवर्तक कौन है ?

स्वामी दयानंद :~ वेदों का प्रवर्तक ईश्वर ही है।

स्वामी विशुद्धानन्द :~ किस प्रकार के ईश्वर में वेद रहते हैं "नित्य ज्ञान विशिष्ट ईश्वर में ?"
"योगसिद्ध क्लेशादि शून्य ईश्वर में ?"
अथवा "सच्चिदानन्द ईश्वर में ?"

दयानन्द रोष में आकर इस प्रश्न का उत्तर न देकर आंखे लाल करके क्रोधमिश्रित स्वर में बोले-

"आपने तो व्याकरण भी बहुत पढ़ा होगा तो बताईऐ- 'कल्म' संज्ञा किस की होती है ?"

इस पर वैयाकरण बालशास्त्री झट से बोले –

"पतञ्जलि के महाभाष्य में एक स्थान पर परिहास में ही कल्म संज्ञा कही गयी है।परन्तु यह प्रकृत संज्ञा नहीं है।"

आप अप्रकृत की चर्चा क्यों करते हैं ?
प्रकृत विचार है पुराणों के वेदविरूद्धता तो इसी पर विचार कीजिऐ न।अन्य चर्चा की आवश्यकता ही क्या ?

अब दयानंद स्वामी सम्हलकर बैठ पूछने लगे-

दयानंद स्वामी :~ पुराणों मे ही म्लेच्छभाषा के अध्ययन का निषेध है। वेद में कहाँ है बताईऐ ?

बालशास्त्री झट से बोले :~ " न म्लेच्छतवै नापभाषितवै "
अर्थात् म्लेच्छ भाषा न बोलें न अपशब्द कहें – यही वैदिक वाक्य का प्रमाण है।

विशुद्धानन्द जी ने अर्थविस्तार किया।

दयानंद स्वामी ने किसी विषय पर प्रमाण खोजने हेतु काशीनरेश से वेद की पुस्तक लाने को कहा।
काशीनरेश बोले -"पण्डितों को सब कण्ठस्थ ही है, पोथी की क्या आवश्यक्ता ?

अब पुराणों की वैदिकता का प्रसंग उपस्थित हो गया।

दयानंद स्वामी :~ वेदों में जहाँ 'पुराण' शब्द आया है वहाँ वह विशेषण है।पुराण का प्रामाण्य है ही नहीं।

स्वामी विशुद्धानन्द :~ वेद में साक्षात् रूप से भी 'पुराण' शब्द प्रयुक्त है-

"आजाह्वे ब्राह्मणानीतिहासान पुराणानि कल्पं गाथा नाराशंसीमेवाहु"।

आपने यहां 'पुराणानि' को 'ब्राह्मणानि' का विशेषण ही माना है,स्वतन्त्र विशेष्यपद नहीं,मध्य में व्यवधान होने से यह दूरान्वय है।अतएव यह विशेषण नही हो सकता।

स्वामी दयानंद :~ व्यवधान कोई हानि नहीं करता –

"अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे"।
यहाँ दूरान्वय तथा व्यवधान होने पर कोई क्षति नही है।

स्वामी विशुद्धानन्द :~ इस वाक्य में सब शब्द विशेषणपद हैं,विशेष्य पद के अभाव में वहां व्यवधान नहीं है।

दयानंद स्वामी :~ "ऋग्वेदं विजानाति••••••इतिहासपुराणः। इस छान्दोग्य श्रुति में भी पुराण विशेषण ही है।

स्वामी विशुद्धानन्द :~ आपने जो कहा यह पाठ शुद्ध नहीं है, पाठ है " इतिहासः पुराणम्"।
'पुराणं' इतिहास का विशेषण हो ही नहीं सकता।
क्योंकि यदि यह विशेषण होता तो, विशेष्य का समानलिङ्गी होता।
पुलिङ्ग 'इतिहास' शब्द का विशेषण होने पर 'पुराण' को भी 'पुराणः' पुल्लिङ्ग ही होना चाहिऐ 'पुराणम्' नहीं।

सभी सभासदों ने विशुद्धानन्द जी की बात का समर्थन करते हुऐ कहा – "यह पाठ साधु नहीं है"।

स्वामी विशुद्धानन्द जी के इस कथन पर स्वामी दयानंद आत्मविश्वास से गरजते हुऐ बोले-

स्वामी दयानंद :~ "इतिहासपुराणः" इत्येवमेव पाठः इति।
चोचेत् मत्पराजयः, अन्यथा युष्माकं पराजय इति लिख्यताम्।

अर्थात् 'इतिहासपुराणः' यही पाठ है। यदि 'इतिहासः पुराणम्' निकल आवे तो मेरी पराजय।
यदि ऐसा न निकले तो आप लोगों की पराजय- इसे लिख लो।

आत्मविश्वास से परिपूर्ण उनकी यह अन्तिम उद्घोषणा थी।

इस पर माधवाचारी जी ने शतपथब्राह्मण के अश्वमेध प्रकरण का वह अंश दिखलाया जिसका अन्तिम अंश है-

“तानुपदिशति पुराणं वेदः सोऽयमिति।
किञ्चित् पुराणमाचक्षीत।
एवमेवाध्वर्युः सम्प्रेषयति।
न प्रक्रमान् जुहोति।

‘पुराणं वेदः’ इस पाठ को देखकर दयानंद स्वामी ग्रन्थ का पन्ना अपने हाथ में लेकर उलट-पुलट कर बहुत देर तक देखते हुए मौन होकर लौटा दिया।

स्वामी दयानंद सरस्वती ने अपनी पराजय स्वीकार की। यह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ यहीं पूर्ण हो गया।
साभार- से